अनुबोधन, खण्ड 2, अंक 1, मार्च 2026, पृष्ठ 29–33
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट), 3108-1185 (ऑनलाइन)
https://doi.org/10.65885/anubodhan.v2n1.2026.003

बौद्ध दर्शन की नैतिकता के मूल में मानवाधिकार विमर्श

प्रीती *

प्राप्तिः 27 फरवरी 2026 / स्वीकृतः 7 मार्च 2026 / प्रकाशितः 31 मार्च 2026
जर्नल वेबसाइटः https://anubodhan.org

मानव एक विवेकशील प्राणी है। अपनी आत्मशक्ति व विवेक के कारण उसे उचित अनुचित का ज्ञान रहता है। समाज में रहकर अपने अंदर सद्‌गुणों का विकास कर अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन दोनों को सुगम बना लेना मनुष्य का कर्तव्य रहा है। समय के साथ–साथ विकसित होती हुई मानवीय सोच ना केवल संभावनाओं के तमाम रास्ते खोजती है वरन् नैतिकता व सभ्य बने रहने की चुनौती भी हमारे सामने उपस्थित करती है। इसके लिए आवश्यक है कि जीवन का कोई भी क्षेत्र हो हमें नैतिक सिद्धांतों के मूल में जाना आवश्यक हो जाता है। इसके लिए भारतीय दर्शन के विभिन्न समुदायों में नैतिक सिद्धांतों का विवेचन प्राप्त होता है जो नैतिक विचारों के रूप में हमारा मार्गदर्शन करते हैं। प्रस्तुत शोधपत्र बौद्ध दर्शन की नैतिकता के मूल में मानवाधिकार विमर्श पर केन्द्रित है।

मनुष्य की गरिमा, समानता, स्वतंत्रता, अधिकार नैतिक मूल्य मानव के सभ्य होने या विकास के क्रम का अनिवार्य हिस्सा है। किसी भी समाज के विकास का मानक सामाजिक राजनीतिक व आर्थिक स्थिति तो है ही साथ ही साथ मनुष्य का स्थान समाज में क्या है, कितने अधिकार मनुष्य को प्राप्त हैं या विभिन्न वर्गों के शोषण ,दमन, अत्याचार की स्थिति क्या है, इत्यादि प्रश्न भी चिन्तन का विषय रहते है। मानवाधिकारों की उत्पत्ति अचानक नही ंहुई है बल्कि यह मानव सभ्यता के विकास की लंबी यात्रा का परिणाम है। धार्मिक असहिष्णुता, सामाजिक, राजनीतिक दासता के प्रति प्रतिरोध ने भारत मे भी स्वतंत्रता, न्याय, समता के प्रति उदारता के भाव की आधारशिला रखा। ये आधारशिला मानवाधिकार के प्रति परिवर्तन के रुप में शासकों तथा धार्मिक आख्याताओं द्वारा स्वीकृति, नैसर्गिक अधिकार एवं वैयक्तिक अभिव्यक्ति के रुप मे हमारे सामने उपस्थित होते है।[1]

सोफिस्टों ने सभी वस्तुओं के केंद्र में मनुष्य को माना है और यह धारणा विकसित हुई कि मनुष्य सृष्टि का सिरमौर है। यद्यपि मानवाधिकार की चर्चा ग्रीक दर्शन में नही आई परंतु बीज रूप में मनुष्य के महत्व को यहां स्थापित किया गया है। वहीं प्लेटो ने

*असिस्टेंट प्रोफेसर, एम. जे. एम. महिला कालेज, कटिहार
ई–मेलः preetirai293@gmail.com

नैतिक आचरण के मानदंड के रूप में सार्वभौमिक नियमों को स्वीकार किया। सार्वभौमिकता का विवेचन प्लेटों ने और आगे चलकर अरस्तू ने किया। अरस्तू ने प्राकृतिक न्याय सिद्धांत को नैतिक माना और यह कहा की प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत साधारण नागरिकों तथा अपराधियों दोनों को समान रूप से होना चाहिए अर्थात् कोई अपराधी भी है तो उसका पक्ष सुनने के लिए हमें नियम बनाना चाहिए और यह नैतिक है।

प्राचीन भारत में मानवाधिकार चेतना की जडें बीज रुप में विद्यमान थी। वैदिक काल में धर्म को एक व्यापक नैतिक और सामाजिक व्यवस्था के रूप में स्वीकार किया गया जिनमे मानव गरिमा तथा न्याय के प्रति सजगता तथा मानवाधिकारो का संरक्षण मिलता था।[2] बौद्ध काल के अंतर्गत मानवाधिकार संबंधी विचारों को और बल मिला। बौद्ध संघ के अंदर तथा समाज में व्यापक स्तर पर मानवाधिकारों को संरक्षण मिलता था। भारतीय संविधान में नागरिक अधिकारों का विस्तृत विवेचन मूल अधिकारों के रूप में विद्यमान है। मूल अधिकार केवल विधिक प्रावधान मात्र न होकर वे गहन दार्शनिक चिंतन व मानव मूल्य आधारित दृष्टिकोण के परिणाम है। ये अधिकार व्यक्ति की गरिमा, समानता, न्याय, स्वतंत्रता, आदि को संवैधानिक संरक्षण प्रदान करते हैं साथ ही भारत के लोकतंत्र की आत्मा को नैतिक आधार प्रदान करते हैं।

बौद्धदर्शन भारतीय दर्शन का एक महत्वपूर्ण संप्रदाय है। इसके सिद्धांत न केवल व्यक्तिगत विकास वरन सामाजिक विकास का मार्ग प्रशस्त करते हैं। बौद्धदर्शन की आचारमीमांसा संपूर्ण मानवता के लिए एक मजबूत आधार स्तंभ के रूप में स्थापित होती है, बौद्धधर्म मे कर्मकाण्ड के स्थान पर नैतिक धर्म पर बल दिया जाता है। वह स्वर्ग, नर्क की धारणा में विश्वास ना करके वासनाओं से मुक्ति तथा अष्टागिंक मार्ग के अनुशरण द्वारा वर्तमान शरीर से ही निर्वाण प्राप्ति को सम्भव बतालाया है। सम्पूर्ण मानवता का कल्याण इसके मूल मे है, बौद्धधर्म को मानवतावादी धर्म कहा जाता है। यह मनुष्य को बंधन तथा दुखों से मुक्ति दिलाने वाला धर्म है। बौद्ध नीतिशास्त्र के मूल्य जो विश्वबंधुत्व, समानता, अहिंसा आदि मूल्यों पर आधारित है ये तत्व न केवल समाज में नैतिकता की स्थापना करते हैं बल्कि मानवाधिकार की अवधारणा को मजबूत करते हैं क्योंकि व्यक्ति की गरिमा, समानता, स्वतंत्रता आदि मानवाधिकार के मूल में विद्यमान है। बौद्धोपदेश ने जातिवर्ग से अलग हटकर स्वतंत्रता तथा व्यक्ति के कर्म पर बल दिया। बुद्ध का वचन था 'हे आनन्द अपनी स्वतंत्रता के लिए हमेशा परिश्रम करते रहो।'[3]

महात्मा बुद्ध के दर्शन का मूल उनके चार आर्य सत्यों में निहित है[4] और इन्हीं आर्य सत्यों से उनके नैतिक सिद्धांतों का मार्ग निकलता है महात्मा बुद्ध ने मानव के दुखों के कारण की खोज की तथा उनके निवारण हेतु मार्ग दिखलाया। संसार दुखमय है। दुख की व्यापकता इस उद्धरण मे प्राप्त होती है कि जब से जगत चला आ रहा है तब से जितने आंसू बहे है उनकी तुलना में सभी सागरों की भी जलराशि भी कम है।[5] दुख होने के कई कारण है, जो कि अविद्या संस्कार आदि बारह कड़ियां है जिन्हें द्वादश निदान कहा जाता है। महात्मा बुद्ध ने इन्हीं दुख से छुटकारा का मार्ग बताया जिसे अष्टांगिक मार्ग कहा जाता है, चतुर्थ आर्य सत्य के अंतर्गत आता है।[6] अष्टांगिक मार्ग के अंतर्गत सम्यकदृष्टि, सम्यकसंकल्प, सम्यकवाक्, समयकर्मान्त्, सम्यक आजीव आदि आठ अंग

शामिल हैं। इन शिक्षाओं के माध्यम से बुद्ध ने यह शिक्षा दी कि वस्तु के वास्तविक स्वरूप का ध्यान रखना, रागद्वेष से मुक्त विचार रखना, अप्रिय वचनों का त्याग, सत्कर्मों का अनुशरण, नैतिक मानसिक उन्नति के लिए प्रयासशील रहना, सच्ची धारणा रखना तथा मन व चित्त की एकाग्रता बनाए रखने के लिए प्रयास करना चाहिए। जिससे निर्वाण का मार्ग भी प्रशस्त होता है।

बौद्धों का पंचशील सिद्धांत भिक्षुओं तथा गृहस्थों दोनों के लिए निर्धारित किये गये है। ये पांच सिद्धांत है– अहिंसा, अस्तेय, सत्य ,ब्रह्मचर्य का पालन और मदिरा आदि नशीली वस्तुओं का त्याग। पंचशील व्यक्ति की इच्छाओं पर नियंत्रण, सभी प्राणियों के प्रति सम्मान, संवेदना, हिंसा और सत्य से दूरी की सीख देता है जो व्यक्ति तथा समाज दोनों स्तरों पर मानवीय गरिमा व सम्मान की स्थापना करते हैं ।

बौद्धदर्शन में समाज में रहकर चार प्रकार के ब्रह्म विहार के पालन की शिक्षा दी गई है– मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा। ब्रह्मविहार से अभिप्राय है चित्त की दिव्य अवस्था। यह चारों मानसिक अवस्थाएं व्यक्ति को आध्यात्मिक और नैतिक रूप से परिपक्व बनाती है तथा समाज में सकारात्मकता तथा संतुलन लाती हैं। इस प्रकार बौद्ध नीतिशास्त्र के अनेक सिद्धांत मानव जीवन की तमाम समस्याओं से निपटाने का मार्ग प्रस्तुत करते हैं तथा विश्वबंधुत्व तथा मानव कल्याण का मार्ग भी प्रशस्त करते है तथा इन्हीं सिद्धांतों में मानव अधिकार के बीज निहित है।

बौद्ध दर्शन में अहिंसा का अत्यधिक महत्व है। अहिंसा का मतलब है– सभी जीवो के प्रति करुणा और सम्मान बनाए रखना। यह विचार मानवाधिकार की रक्षा में काफी महत्वपूर्ण है बौद्धदर्शन में करुणा का सिद्धांत मानव अस्तित्व के आवश्यक मूल्य के रूप में माना जाता है और यह सिद्धांत सभी व्यक्तियों को समान रूप से सम्मानित करने और उनके जीवन के अधिकार के संरक्षण की बात करता है जो कि मानवाधिकारों की मूल मान्यता में शामिल है।

मानवाधिकार के स्वरुप के विश्लेषण से यह बात स्पष्ट होती है कि मानवाधिकार अब केवल किसी एक समुदाय का अनन्यतम विषय नही है पूरे वैश्विक परिदृश्य में मानवाधिकार या मानवीय मूल स्वतंत्रताए[7] जिसके प्रति आदर संरक्षण और संवर्धन आंधी की तरह दौड़ रहा है। मानवाधिकार वह अधिकार है जो प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह स्वदेशी हो या विदेशी हो चाहे वह साधारण नागरिक हो या अपराध करने वाला व्यक्ति हो उन सभी लोगों के लिए यह अधिकार मनुष्य होने के कारण प्राप्त होते हैं। प्रत्येक देश में मानवाधिकार, मानव मात्र के प्रति दया का भाव, करुणा का भाव प्रत्येक दशा में पाया जाता है।

बौद्ध दर्शन का मत था की वैयक्तिक साधना की दृष्टि से एकाकी जीवन लाभदायक हो सकता है परंतु उस साधना से प्राप्त सिद्धि का उपयोग सामाजिक कल्याण हेतु होना आवश्यक है।

सुखिनो वा खेमिनो होन्तु, सब्बेसत्ता भवनतु सुखितत्ता । [8]

राहुल सांकृत्यायन के मत में हमारे मन के विकास में हमारे हाथों–हाथ के श्रम सामाजिक तथा वैयक्तिक दोनों का बड़ा हिस्सा है मनुष्य की तरह ही मनुष्य का मन भी

अपने निर्माण में समाज का बहुत ऋणी है।[9] बौद्ध ग्रन्थों में सामाजिक संबंधों व आध्यात्मिकता पर मुखर होकर बल दिया गया तथा उनका जीवन जगत के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण था[10] जिससे मनुष्य के कल्याण और दुखों से निवृत्ति का भाव सन्निहित था ।

महात्मा बुद्ध ने मध्यम मार्ग के अनुकरण का उपदेश दिया जिसमें भोग तथा वैराग्य दोनों की अति का परित्याग शामिल था। साथ ही बुद्ध ने सांसारिक सुखों को क्षणिक माना और ये स्वीकार किया कि मनुष्य के दुख की वृद्धि इन्हें प्राप्त करने के लिए प्रयास करने से ही होती है। बुद्ध के विचारों के फलस्वरूप समाज में हिंसा व द्वेष काफी हद तक कम हुआ समाज में वैराग्य तथा संन्यास का महत्व काफी बढ़ गया।

बुद्ध का मत था कि मानव की मुक्ति का उसके स्वयं का प्रयास से सम्भव है प्रत्येक व्यक्ति अपने भाग्य का निर्माता स्वय है, किसी बाह्य शक्ति पर निर्भर नहीं। बुद्ध ने स्वतंत्र चिंतन को अंत्यन्त आवश्यक बताया। व्यक्ति को अपने जीवन का मार्ग स्वय ंविवेकपूर्ण तरीके से निर्धारित करना चाहिए ना कि किसी के निर्देश या आदेश पर आधारित होना चाहिए उन्होंने अपने शिष्यों को अंधानुकरण न करने को कहा और अपने उपदेशो को पालन करने को तभी कहा जब स्वयं विचार विमर्श की कसौटी पर खरा उतर जाए। इस प्रकार बुद्ध ने विचारों की स्वतंत्रता, विवेकशीलता, सहिष्णुता आदि गुणों का प्रचार किया वही आज लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा बौद्धिक प्रगति की आधारशिला बनी तथा यही दृष्टि वैश्विक प्रभाव के परिणामस्वरुप समाज के लिए दिशा प्रदान करती है तथा लोगों के जीवन को गहराई से प्रभावित कर रही है। मनुष्य को अहिंसा, इंद्रियसंयम, करुणा, एकाग्रता, संयम आदि गुणों की आवश्यकता होती है जिससे व्यक्ति का जीवन नैतिक व संयमित बन सकता है। बुद्ध का दर्शन निर्वाण प्राप्ति के मार्ग प्रशस्ति के साथ–साथ व्यवहारिक दृष्टिकोण को भी मानवीय संवेदना, समता तथा जनवादी रूप में प्रस्तुत करता है जिससे गरिमा के अनुरूप स्वतंत्र जीवन पद्धति के प्रति पूरे विश्व का झुकाव बढ़ रहा है।[11]

बौद्ध मत में मानवतावाद मानवाधिकारों के प्रति सजगता उनके उपदेशों में सहज रूप से विद्यमान है। उनका दर्शन मूलतः लोक कल्याणकारी भाव पर आधरित है जिसका मुख्य उद्देश्य बहुजन हिताय व बहुजन सुखाय की स्थापना था। बौद्ध धर्म मानव जीवन की सुख शांति नैतिक उन्नति तथा निर्वाण की प्राप्ति को मुख्य उद्देश्य बनाता है तथा इस दृष्टि से बौद्धमत मानवतावादी दर्शन भी कहा जाता है क्योंकि यह सभी मनुष्यों की समान गरिमा और कल्याण पर केन्द्रित होती है। बुद्ध ने अपने उपदेशों की व्याख्या अपनी तरह से की परंतु उनका उद्देश्य यह भी था कि उनके उपदेश जनमानस तक अपनी भाषा में पहुंचे और इस कारण उनका दर्शन व्यवहारिक, जनसाधारण से जुड़ा हुआ दर्शन बने। सामान्यतः बौद्ध वचनों, सिद्धांतों को ऐसे नैतिक अधिकारों के रूप में किया जा सकता है जिनका उपयोग और रक्षा करने का अधिकार प्रत्येक मानव को प्राप्त है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, शिवदत्त, मानवाधिकारों का संवैधानिक आधार, पृ0 7

2. काणे, पी. वी., हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, वॉल्यूम नं 1 1930, ए. एल. बाशम, 'द वंडर दैट वाज इंडिया, 1954

3. भारतवर्ष का इतिहास, ज्ञानमण्डल, पृ0 42

4. सिन्हा, हरेन्द प्रसाद, भारतीय दर्शन की रुपरेखा, पृ0 107

5. कीथ, बुद्धिस्टिक फिलासफी, पृ0 129

6. पाठक, राममूर्ति, भारतीय दर्शन की समीक्षात्मक रुपरेखा, पृ0 22

7. इन्ट्रोडक्शन आई. एल. ओ. एंड ह्यूमन राइट्स (मानवाधिकार के अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन को सौंपी गई रिपोर्ट), पृ0 1

8. सुत्तनिपात–भिक्षु धर्मरक्षित, मोतालाल बनारसीदास, 1973, पृ0 36

9. बौद्धदर्शन–सांस्कृत्यायन, किताब महल, इलाहाबाद, 1983, पृ0 52

10. बलूजा, हरीश कुमार, भारत में बौद्ध धर्म और मानवाधिकार, 2011, पृ0197

11. बलूजा, हरीश कुमार, भारत में बौद्ध धर्म और मानवाधिकार, 2011, पृ0101

Copyright © 2026 Author(s). Published by Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).